अनाशक्ति और वैराग्य

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

प्रवृत्तिमूलक कार्य आशक्ति है। निवृत्तिमूलक कार्य अनाशक्ति है। अध्यात्म भाव, तटस्थ भाव, अनाशक्ति भाव का अभ्यास करते–करते मन में वैराग्य उत्पन्न हो जाता है। वैराग्य का मार्ग है विरक्ति भावना। जीवन में विरक्ति भाव सुख उत्पन्न करता है। इस मार्ग पर चलना कठिन है किन्तु इसका परिणाम बहुत ही मधुर है। संसार का मार्ग आशक्ति का मार्ग है और अध्यात्म का मार्ग अनाशक्ति और वैराग्य का मार्ग है। इस मार्ग का अनुकरण करने से जीवन में सुख और शान्ति प्राप्त होती है।

जीवन मरण के चक्र को बढ़ाने वाला राग–द्वेष हैं। राग का अर्थ है प्रियता और आशक्त होना। माया और मोह राग हैं। इन्द्रिय सुख, परिवार सुख, धन दौलत में लगना राग है। द्वेष का अर्थ है घृणा करना, प्रतिस्पर्द्धा करना, जलन करना। राग–द्वेष आंतरिक बुराई है। रोग–द्वेष जीवन को मोह में डाल देते हैं। क्रोध, मान, माया, लोभ कषाय हैं। जैसे दावानल में सम्पूर्ण जंगल जलकर राख हो जाता है तब दावानल शान्त होता है। उसी प्रकार क्रोध भी दावानल के समान है और जलाकर नष्ट कर देने के बाद शान्त होता है। क्रोध के कारण वातावरण दूषित हो जाता है। पति–पत्नी के बीच टकराव, बच्चों के प्रति टकराव, किसी के प्रति टकराव हो सकता है। यह भयंकर दावानल है।

क्रोध दूसरों का नुकसान करें या न करें किन्तु क्रोध करने वाले को जला ही डालता है। इससे अनेक बिमारियां आती हैं जो मनुष्य को आंतरिक रूप से कमजोर कर देती है। क्रोध को जीतने के लिए क्षमा भाव का विकास आवश्यक है। समस्या का समाधान भी आवश्यक होता है। छोटे व्यक्ति यदि कोई गलती करे तो उन्हें क्षमादान कर देना चाहिए। अहंकार नकारात्मकता को जन्म देता है। मैं ही सब कुछ जानता हूँ, मेरे से बड़ा कोई नहीं है, मुझसे अधिक धनवान कोई नहीं है यह भाव अहंकार का है। अहंकार व्यक्ति को पतन की और ले जाता है। अहंकार को समता, सरलता, मृदुता से जीतना चाहिए। ज्ञान को जीवन में ढालिए तभी ज्ञान का महत्व है। ज्ञान दूसरों को बांटने में बढ़ता है।

भारत की अनेक विद्याएं ऐसे ही नष्ट हो गयी क्योंकि एक पीढ़ी ने दूसरी पीढ़ी को ज्ञान नहीं दिया। यदि एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी को ज्ञान का रूपान्तरण न करें तो ज्ञान संकुचित होकर नष्ट हो जाता है। ज्ञान बांटने से ही बढ़ता है। माया मानव को दुर्गुण की ओर ले जाती हैं, कथनी करनी में अन्तर माया का एक रूप है। माया एक मीठी छुरी की तरह है। जो दोनों ओर काटती हैं। इसलिए किसी को धोख नहीं देना चाहिए।

विषयी व्यक्ति लोभी होता है । लोभी व्यक्ति इतना आसक्त हो जाता है कि वह अपने जीवन को भी नष्ट कर देता है। पॉच इन्द्रियों के विषय जीवन को इतना भोग विलासी बना देते हैं कि सत्य का स्वरूप ही दिखाई नहीं देता। किसी भी वस्तु का त्यागपूर्वक उपभोग करना चाहिए। गीता में त्याग की शिक्षा दी गई है। मोह का अर्थ है अविद्या, अज्ञान, क्रोध, मान, माया, लोभ मोह का परिवार बड़ा लम्बा है। जितनी बुराईयां हैं वह सब मोह रूपी वटवृक्ष की शाखाएं हैं। भारतीय संस्कृति में अनेकता में एकता को महत्व दिया गया है। सभी संस्कृतियों में मोह को अज्ञान कहा गया है। दुःख का कारण मोह है। मोह के कारण व्यक्ति गलत कार्य करता है। निर्मोही अवस्था अच्छाई की अवस्था है। इसलिए बुद्धि को मोह से मुक्त होना चाहिए।

शरीर में पांच कर्मेन्द्रियां, पांच ज्ञानेन्द्रियां और मन सदैव सक्रिय रहता है। इन्द्रियां बाह्य विषयों को ग्रहण कर मन को प्रदान करती हैं। बुद्धि का कार्य है निर्णय करना। कुबुद्धि और सुबुद्धि अपना कार्य करती रहती हैं। सुबुद्धि से अच्छा कार्य और कुबुद्धि से बुरा कार्य होता है। कुबुद्धि बुराई है। राग–द्वेष से किया गया कार्य स्वार्थ से प्रेरित होता है। प्रज्ञा निर्मोही होती हैं। प्रज्ञा आत्मा का प्रतिनिधित्व करती है। प्रज्ञा जागृत रहती है तो बुद्धि मोह युक्त नहीं होती। प्रज्ञा तीसरा नेत्र है। तीसरे नेत्र के उद्‌घाटित हो जाने पर दृष्टि में समभाव आ जाता है।

गीता में स्थितप्रज्ञ का विवेचन किया गया है। स्थितप्रज्ञ की अवस्था समता की अवस्था है। इस अवस्था में मन से राग–द्वेष समाप्त हो जाता है। मानव जैसा बीज बोता है वैसे ही उसको फल प्राप्त होता है। बीज बोने में हम स्वतन्त्र हैं किन्तु फल में परतन्त्र है। जैसा बीज वैसा फल। कारण के बिना कार्य नहीं होता। यदि कारण अच्छा है तो कार्य भी अच्छा होगा। जैसा

पुरुषार्थ किया जायेगा परिणाम भी वैसा ही होगा। मोहग्रस्त बुद्धि अच्छे और बुरे में निर्णय नहीं कर पाती। इसलिए बुद्धि की निर्मलता बहुत आवश्यक है।

बुद्धि मोहग्रस्त न होकर मोहमुक्त होनी चाहिए। हमारे विचारधारा निष्पक्ष होनी चाहिए। महाभारत का युद्ध मोहग्रस्त का परिणाम था। यदि धृतराष्ट्र पुत्र मोह से ग्रस्त न होते तो महाभारत का युद्ध न होता। जहां मोह वहां विनाश अवश्यंभावी है। व्यक्ति को निर्मोही जीवन जीना चाहिए। निर्मोही अवस्था में ही निष्पक्षता हो सकती है। न्यायाधीश किसी पक्ष को छोटा या बड़ा नहीं समझता। वह तर्क का परिक्षण करता है और न्याय देता है। यदि वह मोहग्रस्त हो जाये तो न्याय ही गलत हो जायेगा। सभी के साथ समता का व्यवहार होना चाहिए। योगी हो या भोगी सभी यह चाहते है कि उनके जीवन का अन्त अच्छा हो।